जमीन हो या अंतरिक्ष, वैज्ञानिक इनोवेशन अति आवश्यक

Published:
Sep 24, 2023 - 12:03

Updated: Sep 24, 2023 - 23:19

चांद पर चंद्रयान-3 उतारने में भारत की सफलता ने हमारा सिर गर्व से ऊंचा कर दिया है। ऐसी ही सफलता 1960 के दशक के उत्तरार्ध में मिली थी जब हरित क्रांति के जरिए हमारी बढ़ती आबादी के लिए खाद्य की मांग पूरी की गई। उन दिनों हर साल लगभग एक करोड़ टन गेहूं का आयात अमेरिका से (पीएल 480 के तहत) किया जाता था। आज जब हमारी आबादी 4.5 गुना (143 करोड़) हो गई है और चीन को पीछे छोड़ते हुए हम दुनिया की सबसे अधिक आबादी वाला देश बन गए हैं, तो हमारा खाद्यान्न उत्पादन भी 6.5 गुना बढ़कर 33.05 करोड़ टन हो गया है।

हमारा बफर स्टॉक एक दशक से भी ज्यादा समय से 5 से 7 करोड़ टन के बीच बना हुआ है। कोविड-19 महामारी और रूस-यूक्रेन युद्ध के कारण खाद्य सुरक्षा को लेकर दुनिया भर में चिंता बढ़ी है। इन समस्याओं से पहले दुनिया के 80 करोड़ लोगों के लिए खाद्य असुरक्षा थी, जिसमें इन समस्याओं ने 15.7 करोड़ का इजाफा किया है। लेकिन इसके विपरीत भारत अनाज के मामले में आत्मनिर्भर है और अपनी खाद्य ज़रूरतें खुद पूरी करता है। इसके लिए हमारे कृषि वैज्ञानिक, एक्सटेंशन कर्मी और किसान बधाई के पात्र हैं। यह हमारी मजबूत राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रणाली (एनएआरएस) के कारण संभव हो सका है। भारत आज दूध, दाल, जीरा, ग्वार, केला इत्यादि का सबसे बड़ा और चावल, गेहूं, फल, सब्जियों तथा कपास का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक बन गया है। इस प्रगति के कारण हमारा सालाना कृषि निर्यात 55 अरब डॉलर तक पहुंच गया है।

जाहिर है कि अंतरिक्ष या जमीन पर इस तरह की उपलब्धियां वैज्ञानिक उत्कृष्टता के साथ नीतिगत समर्थन और राजनीतिक इच्छा शक्ति, आईसीएआर, इसरो, सीएसआईआर जैसे संस्थानों, मानव संसाधन और पार्टनरशिप के कारण संभव हो पाई है।

इन उपलब्धियों के बावजूद अब भी कुछ कमियां हैं जिनके लिए हमें आयात पर निर्भर रहना पड़ता है। वित्त वर्ष 2022-23 में भारत ने 1,67,200 करोड़ रुपए के 135.4 लाख टन वनस्पति तेल और 15780.73 करोड़ रुपए की 25.2 लाख टन दालों का आयात किया,

ताकि घरेलू मांग पूरी की जा सके। दलहन और तिलहन में हमारी औसत यील्ड विश्व औसत से कम है। देश में दालों और तिलहन की उत्पादकता और उत्पादन बढ़ाना एक प्रमुख चुनौती है, जिस पर हमें तत्काल ध्यान देना चाहिए। उत्पादन और उत्पादकता दोनों बढ़ाने के लिए जेनेटिक मोडिफिकेशन ऐसा इनोवेशन है जिसे दुनिया भर में 30 से अधिक फसलों में सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है। किसानों के खेत में पहली जीएम फसल 1996 में उगाई गई। इस समय जीएम मक्का, सोयाबीन, कनोला, कपास तथा अन्य फसलों की 29 देशों में 20 करोड़ हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र में खेती की जाती है। भारत में बीटी कपास की खेती होती है। अभी तक इसके पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर किसी विपरीत प्रभाव की रिपोर्ट नहीं आई है।

वर्ष 2002 में सरकार की दूरदर्शिता और साहसिक नीतिगत निर्णय का नतीजा है कि हम बीटी कपास की किस्म जारी कर सके, ताकि किसान उत्पादन बढ़ा सकें और कीटनाशकों का प्रयोग कम कर सकें। उस समय कृषि में जितने कीटनाशकों का इस्तेमाल होता था उसका लगभग 50% कपास में जाता था। बीटी कपास के कारण ही भारत में फाइबर क्रांति हुई। हम न सिर्फ कपास के दूसरे सबसे बड़े उत्पादक बने, बल्कि हमने प्रमुख निर्यातक का दर्जा भी हासिल किया। इस टेक्नोलॉजी के कारण ही हम कपास की खेती का क्षेत्रफल 80 लाख हेक्टेयर से बढ़ाकर 120 लाख हेक्टेयर तक ले जा सके, कपास का उत्पादन लगभग तीन गुना और प्रति हेक्टेयर उत्पादकता दोगुना हो गई। कीटनाशकों का प्रयोग भी लगभग 40 प्रतिशत कम हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि ज्यादातर छोटे किसानों की आय बढ़ी तथा उन्होंने टेक्नोलॉजी को सहर्ष अपनाया। यह उन लोगों के संदेहों के विपरीत था जो जीएम का विरोध करते हैं ।

दुर्भाग्यवश जीएम फसलों का विरोध करने वालों ने ऐसे निराधार तथ्य पेश किए जो अन्य जेनेटिकली मोडिफाइड खाद्य फसलों को अपनाने में बड़ी बाधा बन गये। इसलिए किसान मक्का, सोयाबीन, सरसों, बैंगन जैसी फसलों की उत्पादकता और उत्पादन नहीं बढ़ा सके। यहां यह बताना प्रासंगिक होगा कि दुनिया में अनेक वैज्ञानिक अकादमिक संस्थानों ने जीएम टेक्नोलॉजी की गहन समीक्षा के बाद जीएम फसलों को जारी किया है। इनमें अमेरिका की नेशनल एकेडमी ऑफ़ साइंसेज, द अमेरिकन एसोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइंस, द रॉयल सोसाइटी लंदन, द अफ्रीकन एकेडमी ऑफ़ साइंसेज, यूरोपियन एकेडमीज साइंस एडवाइजरी काउंसिल, अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन, यूनियन ऑफ जर्मन एकेडमिक्स ऑफ़ साइंस एंड ह्यूमैनिटीज शामिल हैं। ये सब अकादमी इस निष्कर्ष पर पहुंची हैं कि जीएम फसलों का जारी किया जाना मानव और पर्यावरण सबके लिए सुरक्षित है।

वर्ष 2019 में करंट साइंस में प्रकाशित एक लेख में भारत के प्रतिष्ठित कृषि वैज्ञानिकों ने भी इस बात का उल्लेख किया था कि उत्पादकता को बरकरार रखने में चुनौतियां आएंगी, इन चुनौतियों से निपटने के लिए वैज्ञानिकों की उचित संसाधनों तक पहुंच होनी चाहिए और उन्हें नए समाधन लेकर आने चाहिए। सौभाग्यवश भारत की रेगुलेटरी संस्थाएं मूल्यांकन के लिए सबसे सख्त प्रोटोकॉल का पालन करती हैं। वैज्ञानिक जब नई टेक्नोलॉजी विकसित करते हैं तो विशेषज्ञों को सख्त रेगुलेटरी व्यवस्था के जरिए मूल्यांकन करने की जरूरत है ताकि नए जेनेटिकली मोडिफाइड इनोवेशन और उन्हें रिलीज करने पर जल्दी नीतिगत फैसला लिया जा सके। चाहे वह बाहर से जीन ट्रांसफर पर आधारित हो, अथवा पौधों में मौजूद जीन में बदलाव पर आधारित। वर्ष 2018 में 129 नोबेल पुरस्कार से सम्मानित वैज्ञानिकों ने 'ग्रीन पार्टीज' को समझाने के लिए एक अभियान चलाया गया था उसमें बताया गया कि जीएमओ सुरक्षित हैं और विकासशील विश्व में खाद्य और पोषण की सुरक्षा के लिए इनका समर्थन किया जाना चाहिए।

दुर्भाग्यवश भारत में पिछली सरकार ने करीब 10 साल पहले नई जीएम फसलों पर रोक लगा दी थी। हालांकि पर्यावरण, वन एवं जलवायु मंत्रालय ने 18 अक्टूबर 2022 को एक साहसिक फैसला लिया। जीईएसी की सिफारिश के आधार पर इसने सरसों के ट्रांसजेनिक हाइब्रिड डीएमएच-11 और इसकी पैरेंटल लाइंस को जारी करने का निर्णय लिया। दिल्ली विश्वविद्यालय के सेंटर फॉर जेनेटिक मैनिपुलेशन ऑफ़ क्रॉप प्लांट्स के वैज्ञानिकों ने इसे भारत में ही विकसित किया है। इसमें तीन ट्रांसजीन का प्रयोग किया गया है । पहला है बार जीन जो पौधे को खरपतवार रोधी बनता है, दूसरा है बार्नेस जो पौधों में मौजूद पुरुष जींस को स्टेराइल बनाता है और तीसरा है बारस्टार जो फर्टिलिटी रेस्टोरेशन का काम करता है। यह जीन कनाडा में रेपसीड में पहले ही इस्तेमाल किए जा रहे हैं। सच तो यह है कि कनाडा में 1996, अमेरिका में 2002 और ऑस्ट्रेलिया में 2003 से जीएम रेपसीड हाइब्रिड की खेती की जा रही है। इससे पर्यावरण अथवा मनुष्य के स्वास्थ्य पर किसी नकारात्मक प्रभाव की रिपोर्ट नहीं आई है। इस तरह देखें तो हम इस अत्यधिक क्षमता वाली टेक्नोलॉजी के फायदे उठाने में दो दशक पीछे हैं। दूसरी तरफ, हम अपनी जरूरत पूरी करने के लिए कनाडा से लंबे समय से जीएम आधारित कनोला तेल का आयात कर रहे हैं। तिलहन के मामले में आत्मनिर्भर बनने के लिए जीएम सरसों को जारी किया जाना देश में हमारे प्लांट ब्रीडर द्वारा नई हाइब्रिड किस्में विकसित करने का रास्ता तैयार करता है। इससे उत्पादन और उत्पादकता दोनों में वृद्धि हो सकती है।

हमने 2030 तक के लिए जो सतत विकास लक्ष्य (एसडीजी) निर्धारित किए हैं उनमें दो महत्वपूर्ण हैं जीरो हंगर यानी कोई भूखा ना रहे और सबके लिए अच्छी सेहत। इसे हासिल करने में हमारे सामने गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले करीब 20 करोड़ लोगों और 5 साल से कम उम्र के लगभग 43 लाख कुपोषित बच्चों को पोषक आहार उपलब्ध कराने की चुनौती है। इसके अलावा जमीन, पानी, हवा और कृषि जैव विविधता जैसे घटते प्राकृतिक संसाधनों, वैश्विक खाद्य सुरक्षा पर जलवायु परिवर्तन के विपरीत प्रभाव, तापमान में वृद्धि और बाढ़ तथा सूखा की बढ़ती फ्रीक्वेंसी जैसी चुनौतियों से भी प्रभावी तरीके से निपटने की जरूरत है। जेनेटिकली मोडिफाइड मक्का और सोयाबीन जैसी जीएम फसलों की खेती निश्चित रूप से राष्ट्रीय स्तर पर इन चिंताओं को दूर करने में मददगार साबित होगी। इससे आमदनी बढ़ने के साथ गरीबी में भी कमी आएगी। इसलिए हमें व्यापक राष्ट्रीय हित में नई प्रौद्योगिकीय तकनीकों को अपनाने और सरकारी-निजी साझेदारी का वातावरण तैयार करने के लिए आक्रामक रवैया अपनाने की जरूरत है।

उम्मीद है कि तिलहन के मामले में आत्मनिर्भर बनने और मेक इन इंडिया टेक्नोलॉजी को प्रमोट करने के सरकार के लक्ष्य को सुप्रीम कोर्ट सही ठहराएगा। सार्वजनिक प्रणाली में विकसित टेक्नोलॉजी देश को आत्मनिर्भर बनाने में मददगार होगी। हमारा मुख्य लक्ष्य यह होना चाहिए कि कोई भी नागरिक भूखा ने सोये और कोई भी गरीबी रेखा से नीचे ना रहे। वर्ष 2030 तक सतत विकास के इन लक्ष्यों को हासिल करने के लिए समय तेजी से निकलता जा रहा है। जीएम सरसों टेक्नोलॉजी का किसानों के खेतों में मौजूदा सीजन में ही व्यापक परीक्षण किया जाना चाहिए। इसमें देरी का मतलब है और एक साल गंवा देना। हमारे सामने घरेलू मांग पूरी करने के लिए दो विकल्प हैं- या तो अधिक कीमत पर तेल का आयात किया जाए या देश में ही हम उत्पादन बढ़ाकर हम अपनी जरूरत पूरी करें।

(लेखक पद्म भूषण से सम्मानित, आईसीएआर के पूर्व डायरेक्टर जनरल, कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग के पूर्व सचिव और इंडियन साइंस कांग्रेस के पूर्व प्रेसिडेंट हैं)